Indian Scholar
An International Multidisciplinary Research e-Journal
ISSN 2350-109X
www.indianscholar.co.in

# भारत में एकता की पहचान है 'हिन्दी'

**डॉ. ममता कदम**
(अतिथि विद्वान)
नेट, पीएच.डी. (हिन्दी), एलएल.एम.
शासकीय महाविद्यालय मेहगाँव
जिला–भिण्ड

'हिन्दी' भाषा जिस धरती पर समृद्ध हुई, वह यही एक मात्र भरत मुनि की पावन धरती के अलावा और कोई नहीं हो सकती। इसकी आबादी के बारे में हम जानते हैं यह मूलतः हिन्दू धर्म के चार वर्णों का मिश्रण रही है जो कालांतर में जातियों वर्गों में परिवर्तित हो गईं। इन्हीं जातियों के बीच के वैवाहिक संबंधों ने हमारी संस्कृति को बहुरंगा स्वरूप प्रदान किया। हिन्दू धर्म के अलावा जैन, बुद्ध, इस्लाम, सिख, इसाई, पारसी आदि विभिन्न धर्मों के विवध प्रकार की संस्कृतियों ने भी भारत में विविधता को जन्म दिया है। हमारे यहाँ विविधता में एकता अनादि काल से हमारी सांस्कृतिक पहचान रही है। भारत की भौगोलिक स्थिति के अनुसार भाषा में यह भी एक प्राकृतिक विशेषता होती है कि वह भौगोलिक रूप से स्थानीयकृत होती है। अर्थात प्रत्येक भाषा अथवा बोली की भौगोलिक सीमाएँ होती हैं। इस विषय में यह कथन पूर्णतया सत्य सिद्ध होता है। कि:– **'चार कोस पर पानी बदले; आठ कोस पर बानी।'** यह लोकोक्ति स्पष्टतः सिद्ध करती है कि भाषा भौगोलिक रूप से स्थानीयकृत होती है। यहाँ पर जाति व्यवस्था ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया है जिसके प्रभाव से न सिर्फ जातीय, बल्कि भाषाई आधार पर भी भारत की विविधता गौर के काबिल है, अलग–अलग क्षेत्रों में अलग भाषाएँ बोली जाती हैं। उत्पित्त के लिहाज सेभी इन्हें अलग–अलग भाषाई समूहों में वर्गीकृत किया जाता है। इन भाषाओं की अपनी लिपियाँ हैं, अपना साहित्य है और एक समृद्ध सांस्कृतिक विरासत भी।

विभिन्न भाषाशास्त्रियों ने भारत के अलग–अलग क्षेत्रों एवं प्रान्तों में बोली जाने वाली भाषाओं को कई वर्गों में विभाजित किया है। यहाँ पर लगभग 76 प्रतिशत लोग आर्य भाषा समूह की बोली बोलते हैं, 20 प्रतिशत द्रविड़ और 4 प्रतिशत लोग शबर–कराती भाषाभाषी माने गए हैं। मंगोल जाति के लोग तिब्बती–चीनी परिवार की भाषाएँ बोलते हैं। इस भाषा पर आर्य भाषाओं का प्रभाव भी देखने को मिलता है। तमिल, तेलुगू, कन्नड़ और मलयालम द्रविड़ परिवार की मुख्य भाषाएँ हैं, जो तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और केरल में बोली जाती हैं, द्रविड़ भाषाओं के अनेक शब्द और प्रयोग आर्य भाषाओं में आ गए हैं, जबकि संस्कृत के अनेक शब्द द्रविड़ भाषाओं में मिल गए हैं। फिर भी भारत के दिक्षणी राज्यों में उक्त चार भाषाएँ ही प्रचलित हैं। दक्षिण भारत से बाहर भी दो जगहों पर द्रविड़ भाषा बोले जाने के सबूत हैं। यह इस बात का सबूत है कि द्रविड़ लोग कभी भारत के दूसरे हिस्सों में भी फैले थे। उदाहरण के तौर पर, बलूचिस्तान की ब्रहुई भाषा द्रविड़ समूह की भाषा मानी जाती है, जबकि झारखंड के प्रमुख आदिवासी ओरांव जो भाषा बोलते हैं, वह भी द्रविड़ों से मिलती–जुलती है।

भारतीय इतिहास में हिन्दी, उर्दू, बांग्ला, मराठी, गुजराती, उड़िया, पंजाबी, असमी और कश्मीरी आदि आर्य भाषाएँ बताई गई हैं, जो संस्कृत की परंपरा से उत्पन्न हुई हैं। भारत से बाहर आर्य भाषाओं का संबंध इंडो–जर्मन भाषा समूह से है। प्राचीन पारसी, यूनानी, लातीनी, केल्ट, त्युतनी, जर्मन और स्लाव आदि भाषाओं के साथ हमारी संस्कृति का बहुत निकट का संबंध था और वह नाता आज भी है। लातीनी प्राचीन इटली की भाषा थी और अब इटली, फ्रांस और स्पेन में उसकी वंशज भाषाएं मौजूद हैं। प्राचीन केल्ट की मुख्य वंशज आजकल की गैलिक यानी आयरलैंड की भाषा है। जर्मन, ओलंदेज(डच), अंग्रेजी, डेन और स्वीडिश आदि

भाषाएँ जर्मन या त्युतनी परिवार की हैं। आधुनिक रूस एवं पूर्वी यूरोप की भाषाएँ स्लाव परिवार की हैं। इन सब भाषाओं का परिवार आर्य वंश कहलाता है। इंडो–जर्मन परिवार की भाषाओं में जो समानता है। उसी से यह अनुमान लगाया गया है कि प्रायः समस्त यूरोपीय भाषाएं उसी भाषा परिवार से निकली हैं, जिस परिवार के भारतीय आर्य थे। यही नहीं, ऋग्वेद केवल भारतीय आर्यों का ही नहीं, बल्कि विश्व भर के आर्यों का सबसे प्राचीन ग्रंथ है। वेद समूची मनुष्य जाति का प्राचीनतम ग्रंथ है। 19वीं सदी में जब इस सत्य का प्रचार हुआ, तब विश्व भर के अनेक विद्वान संस्कृत का अध्ययन करने लगे और इसी अध्ययन के परिणामस्वरूप आर्य वंश के विस्तृत इतिहास की रचना की जाने लगी। संस्कृत को सभी आर्यों की मूल भाषा सिद्ध करते हुए मैक्समूलर ने लिखा था कि संसार भर की आर्य भाषाओं में जितने भी शब्द हैं, वे संस्कृत की सिर्फ़ पांच सौ धातुओं से निकले हैं।

विभिन्न भाषाओं के आधार पर भारत में जातियों की जो पहचान की गई है, उसका उल्लेख करते हुए डॉ. सुनीति कुमार चटर्जी ने लिखा है कि भारतीय जनसंख्या की रचना जिन लोगों को लेकर हुई है, वे मुख्यतः तीन भाषाओं–ऑष्ट्रिक अथवा आग्नेय, द्रविड़ और इंडो–यूरोपीय (हिन्दी–जर्मन) में विभक्त किए जा सकते हैं। नीग्रो से लेकर आर्य तक इस देश में जो भी आए, उनकी भाषाएं इन भाषाओं के भीतर समाई हुई हैं। असल में भारतीय जनता की रचना आर्यों के आगमन के बाद ही पूरी हुई। उसे ही हम आर्य या हिन्दू सभ्यता कहते हैं। आर्यों ने भारत में जातियों और संस्कृतियों का जो समन्वय किया, उसी से हिन्दू समाज और हिन्दू संस्कृति का निर्माण हुआ। बाद में मंगोल, यूनानी, यूची, शक, आभीर, हूण और तुर्क जो भी आए, इसमें विलीन होते चले गए।

हम इस बात से अच्छी तरह परिचित हैं कि 'हिन्दी' शब्द के कई अर्थ प्रचलित रहे हैं। इसका सबसे सही और व्यापक अर्थ है भारतीय। जो कुछ भी भारतीय था एक ज़माने में अभारतीयों द्वारा उसे 'हिन्दी' कहा जाता था और इसी का एक पहलू यह कि यह शब्द सभी भारतीय भाषाओं का द्योतक था। कालान्तर में यह उस क्षेत्र की 5 उपभाषाओं और 17 बोलियों का एक सामूहिक नाम बन गया जिसे आज हिन्दीभाषी क्षेत्र कहते हैं। साहित्य में आज भी यही अर्थ व्यवहृत है; लेकिन राजभाषा के रूप में स्वीकृत होने पर इसका अर्थ केवल कौरवी या खड़ी बोली के परिनिष्ठित रूप तक सिमट गया। आज जब भारतवर्ष धर्म, क्षेत्र, भाषा, जाति और नस्ल के नाम पर टुकड़े–टुकड़े होने की ओर अग्रसर है; यह याद रखना ज़रूरी है कि मूलतः हिन्दी शब्दधर्म, भाषा, जाति और नस्ल से परे समग्र भारतीयता की एक अनूठी पहचान है।

यदि साहित्य के इतिहास में हिन्दी भाषा ने अपनी हजार साल से ज्यादा की यात्रा में अभी तक अनेक पड़ाव पार किए हैं, उतार–चढ़ाव देखे हैं। उसकी इस विकास यात्रा की एक बड़ी विशेषता यह रही है कि वह सदा जन की ओर प्रवाहित होती रही है। चाहे बोलियों और भाषाओँ के बीच संपर्क की बात हो, या व्यापार–वाणिज्य और ज्ञान–विज्ञान से लेकर धर्म–अध्यात्म और राष्ट्रीयता की चेतना के अखिल भारतीय प्रसार की बात हो अथवा दक्षिण एशिया के लोगों के आपसी वार्तालाप की बात हो या फिर विश्व भर में फैले भारतवंशियों की भारतीय पहचान की बात हो; हिन्दी इन सारी भूमिकाओं को बखूबी निभाती आई है, और आज भी निभा रही है क्योंकि उसमें जन से जुड़ने की अद्भुत शक्ति विद्यमान है जो उसके लचीलेपन के रूप में सामने आती है।

'हिन्दी' का जन्म जब लगभग 1000 ई. के आसपास हुआ तो वह केवल बोलचाल की भाषा थी, सामान्य जीवन तथा उससे संबंधित यथा खेती, व्यापार, लुहारी, बढ़ईगिरी, कुम्हारी, सिलाईगिरी आदि आवश्यक क्षेत्रों में इसका प्रयोग होता था और इनसे जुड़े हुए विशेषीकृत रूप थें। किन्तु ये संख्या में बहुत ही कम थे, कालक्रम में जैसे–जैसे साहित्य, ज्योतिष धर्म आदि अन्य विशिष्ट क्षेत्रों में हिन्दी भाषा का प्रयोग बढ़ता गया वैसे–वैसे इसके हिन्दी का विभिन्न रूप विकसित होता गया। मध्यकाल में प्रशासनिक, कलईगिरी वस्त्र–उद्योग आदि कई दृष्टियों से हिन्दी–भाषी जनता की नई विशेषज्ञताएँ बढ़ीं, अतः हिन्दी के प्रयोजनमूलक नए रूप भी

अस्तित्व में आए। अंग्रेजी शासन में यूरोपीय संपर्क से हमारा सामाजिक, आर्थिक और प्रशासनिक, ढाँचा काफी बदला, धीरे–धीरे हमारे जीवन में नई उपलब्धियों जैसे कि पत्रकारिता, इंजीनियरी, बैंकिंग, शेयर बाजार, मेडिकल आदि आयीं और तदनुकूल हिन्दी के नए प्रयोजनमूलक भाषिक रूप भी उभरे। इस कारण आज 'हिन्दी' भारत के अलावा सूरी, मौरिशस, फिजी तथा वियतनाम आदि देशों में भी अपना पैर जमाने लगी।

हिन्दी भाषा प्रयुक्ति और प्रयोजन से रहित भाषा अब भाषा ही नहीं रह गई है। औद्योगिक क्रांति के चलते भाषा बहुआयामी हो गई है। भारतीय जनमानस हिन्दी के किसी न किसी रूप को अपने दैनिक प्रेषण व्यवहार में साधन बनाता है, प्रयुक्तियों को अपनाता है। भाषा की सामाजिक, व्यावहारिक प्रयुक्तियों के साथ प्रयोजनमूलक भाषा की चर्चा का सीधा और अपरिहार्य संबंध है। सामाजिक प्रयुक्ति के धरातल पर कोई भी भाषा हमेशा एक जैसी नहीं रहती, विषय, अभिव्यक्ति और सामाजिक परिस्थिति के अनुरूप भाषा के अनेक चेहरे हमारे सामने आते हैं। न्यायालय में जैसी हिन्दी चलती है ठीक वैसी ही हिन्दी विज्ञापनों के लिए उपयोगी नहीं होती, साहित्यकार की हिन्दी कार्यालय की हिन्दी से भिन्न है। अलग–अलग स्थितियों और स्थलों पर भाषा की अलग–अलग प्रयुक्तियाँ हैं। कोई भी भाषा समाज में जितने अधिक क्षेत्रों में प्रयुक्त होगी उसकी प्रयुक्तियाँ भी उतनी ही अधिक होती है, भाषा की प्रयुक्तियाँ संसार में बहुआयामी हैं।

बहुभाषिकता की दृष्टि से भारत संभवतः विश्व भर में सर्वाधिक विविधताओं और विचित्रताओं वाला देश है। हजारों मातृभाषाएँ यहाँ हजारों साल से बोली जाती हैं। भिन्न भाषा भाषियों के बीच परस्पर संवाद के लिए अलग–अलग संदर्भों में कई भाषाएँ संपर्क भाषा का काम करती हैं। भारत की जिस धार्मिक और सांस्कृतिक एकता की प्रायः चर्चा की जाती है उसका आधार संभवतः ऐसी संपर्क भाषा रही होगी जिसके माध्यम से देश भर में पर्यटन, तीर्थाटन और व्यापार–व्यवसाय करने वाले परस्पर विचार–विनिमय करते रहे होंगे। प्राचीन भारत में यह भूमिका संस्कृत ने निभाई और आधुनिक भारत में यह काम हिन्दी कर रही है। यह भी देखा जा सकता है कि जब–जब भारत में कोई धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक आंदोलन खड़ा हुआ या किसी लोकनायक ने संपूर्ण देश को एक साथ संबोधित करना चाहा, तब–तब उन आंदोलनों और लोकनायकों ने उस काल की संपर्क भाषा को अपनाया। यही आवश्यकता 19वीं–20वीं शताब्दी में स्वतंत्रता आंदोलन के नायकों ने अनुभव की और निर्विवाद रूप से हिन्दी को व्यापक जनसंपर्क के लिए सर्वाधिक समर्थ भाषा के रूप में पाया और स्वीकार किया। महात्मा गाँधी और उनके समकालीनों ने इसीलिए हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में प्रतिष्ठा प्रदान की। राजभाषा के रूप में भी हिन्दी की प्रतिष्ठा का यही आधार रहा। इसलिए यह आवश्यक है कि हम हिन्दी के प्रयोक्ता आपने दैनिक व्यवहार से लेकर औपचारिक अवसरों तक पर सर्वत्र हिन्दी के व्यवहार को व्यापकतर बनाएँ ताकि उसकी सर्वग्राह्यता बढ़ती रह सके।

अपनी जनशक्ति के कारण ही 'हिन्दी' भाषा ने लंबी चर्चा के बाद स्वतंत्र भारत–संघ की राजभाषा का स्थान प्राप्त किया। इसमें संदेह नहीं कि भारतीय संविधान द्वारा प्रस्तुत भाषा–नीति 'संघीय, लोकतांत्रिक, संतुलित, समावेशी और भाषा–निरपेक्ष' है। जिसमें सभी भारतीय भाषाओं के विकास की संभावनाओं का पूरा ख़याल रखा गया है। 14, सितम्बर 1949 को भाषा सम्बन्धी प्रावधानों को संविधान सभा ने स्वीकृत किया था और यह तय किया गया था कि 15 वर्ष के भीतर हिन्दी को व्यवहारतः उसका संवैधानिक अधिकार दिलाने के लिए आवश्यक प्रयास किए जाएंगे। लेकिन ऐसा हुआ नहीं; इसलिए हिन्दी को हर क्षेत्र में प्रसारित करने के लिए राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा ने सन् 1953 से संपूर्ण भारत में 14, सितंबर को प्रतिवर्ष हिन्दी–दिवस के रूप में मनाना शुरू किया। आगे चलकर केन्द्र सरकार ने इसे सरकारी कार्यालयों के लिए एक अनिवार्य आयोजन का रूप दे दिया। संविधान लागू होने के 15 वर्ष पूरे होने को आते ही कुछ प्रान्तों में भाषाई राजनीति का ऐसा उबाल आया कि हिन्दी के साथ अंग्रेजी को सह–राजभाषा बना दिया गया और हिन्दी का विरोध करने वाले राज्यों की सहमति की अनिवार्यता के कारण हिन्दी के व्यावहारिक रूप में भारत संघ की राजभाषा बनने की संभावनाओं पर पानी फिर गया। इसलिए हिन्दी दिवस के बहाने भाषा–चेतना जगाना आज केवल सरकारी कार्यालयों का कर्मकांड भर नहीं, एक राष्ट्रीय आवश्यकता है।

आगामी 14, सितंबर को जब–जब हम हिन्दी दिवस मनाएँ तो भारत के संविधान के अनुच्छेद–343 से अनुच्छेद–351 तथा अनुसूची–8 के प्रावधानों का तो खयाल रखें ही, यह भी खयाल रखें कि राजभाषा की यह सारी व्यवस्था भारत की जातीय अस्मिता और सांस्कृतिक विरासत को अक्षुण्ण बनाए रखने तथा विकसित करने के उद्देश्य से की गई है। इसे केवल सरकारी कामकाज की भाषा तक सीमित रखना उचित नहीं होगा। बल्कि सच तो यह है कि अनुच्छेद–351के निर्देश के अनुरूप हिन्दी का सामासिक स्वरूप राजभाषा की अपेक्षा व्यापक जनसंपर्क, शिक्षा, साहित्य, मीडिया, वाणिज्य, व्यवसाय, ज्ञानविज्ञान और तकनीकी की भाषा के रूप में उसके व्यापक व्यवहार द्वारा ही संभव है। विभिन्न संवैधानिक संस्थाओं के माध्यम से यह माँग उठनी चाहिए कि हिन्दी का जो संवैधानिक अधिकार लंबे अरसे से लंबित या स्थगित पड़ा है, उसे तुरंत बहाल किया जाए। ज़रूरी हो तो इसके लिए न्यायालय की भी शरण में जाया जा सकता है। यदि हिन्दी को यह स्थान मिल जाएगा तो सभी भारतीय भाषाओं को इससे बल मिलेगा तथा परस्पर अनुवाद द्वारा उनके माध्यम से हिन्दी भी बल प्राप्त करेगी। मौलिक लेखन के साथ–साथ व्यापक स्तर पर अनुवाद को अपना कर हिन्दी को भूमंडलीय ज्ञान की खिड़की बनाया जा सकता है, अतः इस दिशा में भी ईमानदारी से प्रयास करने की जरूरत है। तभी हिन्दी का वह सामासिक और वैश्विक स्वरूप उभर सकेगा जो भारत ही नहीं, दुनिया भर के किसी भी भाषा–भाषी को बरबस अपनी ओर खींच लेगा।

जहाँ एक ओर सम्पूर्ण भारत विकास के सभी क्षेत्रों में नित नये आयाम छू रहा है वहीं दूसरी ओर वह सामाजिक विकास में भी हो रहे परिवर्तनों से हम सब सभी भलि भाँति परिचित है। वहीं भाषा के क्षेत्र में भी भारत की एकता की पहचान यदि कोई भाषा करा सकती है तो वह भाषा एक मात्र हिन्दी ही हो सकती है। यह अवधारणा स्वतंत्रता के पूर्व से आज तक एक अबुझ पहेली की तरह कायम है। किन्तु अब इसे साकार करने का समय आ गया है।

इस प्रश्न का उत्तर कौन देगा? जब तक देश के भाग्य–विधायक यह नहीं समझ जाते कि अंग्रेज़ी की गुलामी के विष को राष्ट्र के शरीर से पूरी तरह निकाले बिना पूर्ण स्वास्थ्य–लाभ संभव नहीं है, कि बना पूर्ण स्वास्थ्य–लाभ के स्वस्थ, संतुलित, अनाविल दृष्टि उपलभ्य नहीं हो सकती, और बिना स्वस्थ दृष्टि पाये हम कभी अपने लक्ष्य या मार्ग को भली भाँति देख न सकेंगे–जब तक हमारे शासक यह न समझ जाएंगे तब तक यह आशा करना व्यर्थ है कि संविधान की राजभाषा–संबंधी धारा सचमुच मान्य होगी। शायद महात्मा गांधी के मन में कहीं यह आशंका छिपी थी कि देश स्वतंत्र भी हो जाए तो भी शायद राष्ट्रीय स्वाभिमान सच्चे अर्थ में जाग्रत न हो पाए।

''यदि एक भाषा के न होने के कारण भारत में एकता नहीं होती है, तो इसका उपाय ही क्या है? **अब भारत वर्ष में एकमात्र उपाय एक ही भाषा में व्यवहार करना है।** अभी भारत में कितनी ही भाषाएँ प्रचलित है। हिन्दी ही सवर्त्र प्रचलित है। यदि इस 'हिन्दीभाषा' को भारत की एक मात्र भाषा स्वीकार कर लिया जाए, तो सहज रूप में यह एकता सम्पन्न हो सकती है। किन्तु राज्यों की सहायता के बिना यह कभी भी संभव नहीं हो सकती। भारत स्वतंत्र तो वर्षों पूर्व ही हो गया था किन्तु आज भी भाषायी रूप से अंग्रेज ही हमारे राजा बने हुए हैं, वे अपनी फूट डालो शासन करो की नीति की इस परंपरा को भारतीयों को कुछ इस तरह दे कर गए हैं कि भारत के शासक अपने लाभ के लिए इस ब्रिटिश साम्राज्य को कायम किये हुए हैं। आज तक हमारे शासकों और हमने अपने छोटे–छोटे निजी स्वार्थों हेतु उसे सहज कर रखते हुए अपने व्यवहार में शामिल कर लिया है। जिससे भारत में एकता होते हुए भी वास्तिविक मायने एकता नहीं है।

आज भारत विश्व की महाशक्ति के रूप में विकसित हो रहा है। किन्तु भारत एक विशाल राष्ट्र होते हुए भी यहाँ की एकता विभिन्न भाषाओं में बिखरी पड़ी है। ऐसे समय में **अब राजभाषा को राष्ट्रभाषा में परिवर्तित करने की आवश्यकता अब सवर्त्र महसूस की जाने लगी है।** लागों ने अपने विचारों का अच्छी तरह

प्रचार करने के लिए भगवान बुद्ध ने भी एक भाषा को प्रधानता देकर कार्य किया था। हिन्दी भाषा राष्ट्र भाषा सर्वसाधारण के लिये जरूर होनी चाहिए। मनुष्य–हृदय एक दूसरे से विचार विनिमय करना चाहता है। इसलिए राष्ट्रभाषा की अत्यन्त आवश्यकता है। विद्यालयों, महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों और तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र के संस्थानों में भी हिन्दी का भरपूर प्रचान प्रसार होना चाहिए। इस प्रकार 'हिन्दी' का कुछ ही वर्षों में एक सशक्त भाषा के रूप में उभर कर अतिशीघ्र ही राष्ट्र भाषा का आकार लेना सुनिश्चित है।

मेरी समझ में हिन्दी जन–सामान्य की भाषा होनी चाहिए; यानी समस्त हिन्दुस्तान में बोली और समझे जाने वाली भाषा होनी चाहिए। यद्यपि यह भी निश्चित है कि हिन्दी दूसरे कार्यों के लिये प्रान्तीय भाषाओं की जगह तो नहीं ले सकती। किन्तु सभी प्रान्तीय कार्यों के लिये प्रान्तीय भाषाएँ पूर्व की भाँति काम में आती रहेगी। प्रान्तीय शिक्षा और साहित्य का विकास प्रान्तीय भाषाओ के माध्यम से ही होगा; लेकिन जब एक प्रान्त दूसरे प्रान्त से मिले, तो पारस्परिक विचार विनिमय का माध्यम हिन्दी ही होना चाहिए। क्योंकि हिन्दी अब भी अधिकांश प्रान्तों में समझ ली जाती है और बोलने तथा चिट्ठी लिखने लायक हिन्दी थोड़े ही समय में सीख ली जाती है। इस विषय में कोई प्रान्तीय या स्थानीय भाषा हिन्दी का स्थान नहीं ले सकती।

यह निश्चय ही दुख की बात है कि देश के कर्णधार अब तक यही न समझ पाए कि अंग्रेज़ी के महत्व को घटाना हमारे लिए इस समय एक अनिवार्य आवश्यकता है–क्योंकि अभी हमें स्वतंत्र हुए इतने दिन नहीं हुए कि अंग्रेज़ी के प्रति हमारी दृष्टि वैसी ही स्वस्थ, संतुलित और स्पष्ट हो सके जैसी अन्य विदेशी भाषाओं के प्रति सहज ही हो सकती है। माना कि अंग्रेज़ी आज संसार में प्रायः सर्वाधिक उपयोगी भाषा हो गयी है, पर इस का न यह अर्थ है कि प्रत्येक भारतीय के लिए अंग्रेजी जानना जरूरी है और न यही कि प्रत्येक अंग्रेज़ी जानने वाले भारतीय को अपने सामान्य, दैनंदिन जीवन में अंग्रेज़ी का उपयोग करना चाहिए। अंग्रेज़ी की अनिवार्य शिक्षा, अंग्रेज़ी के अध्ययन के लिए लोगों को प्रोत्साहित करने के प्रयत्न, प्रशासकीय कार्य में अंग्रेज़ी का उपयोग इनमें से किस चीज़ की इस कारण जरूरत है कि अंग्रेज़ी एक महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय भाषा है? किन्तु इसका अन्धानुकरण किसलिए कर रहे हैं जबकि अधिकांश कार्य को हिन्दी भाषा के माध्यम से किया जा सकता है। हिन्दी का विकास उसके गुणों के कारण हो रहा है। इसे आसानी से सीखा जा सकता है। इसमें प्रयुक्त देवनागरी संसार की सर्वश्रेष्ठ लिपियों में से एक है, जिसमें हर ध्वनि के लिए अलग अक्षर है। अँग्रेज़ी की रोमन लिपि में कुल 26 वर्ण हैं जबकि देवनागरी में उससे दुगुने 52 वर्ण हैं। आज भारत में अस्सी करोड़ से अधिक लोग हिन्दीभाषी हैं। यहाँ हर व्यक्ति चाहे उसकी मातृभाषा कुछ भी हो, हिन्दी समझता जरूर है। सच में रक्त, भाषा और संस्कृति हर लिहाज़ से भारत की जनता अनेकता में एकता की मिसाल है।

यह तो तय है कि यदि हिन्दी को राजभाषा के सिंहासन पर स्थायी रूप से आरूढ़ देखे जाने की राष्ट्रीय इच्छा है तो, जो अब तक संभव नहीं हो सका है,उसे संभव करना होगा अर्थात इसे देश के हर भाग में एक सवर्प्रिय भाषा बनाया जाना होगा। विभिन्न प्रांतों में एकाधिक प्रांतीय भाषाएं जनमानस में अति प्राचीन काल से गहरी पैठ बनाए हुए हैं और उनसे उनका आत्मिक रिश्ता बना हुआ है। उनसे संबंधित प्रांतों की सांस्कृतिक विरासत मुखर होती है। ऐसे में एक सवाल उठना लाज़मी है कि क्या वहाँ की सांस्कृतिक विरासत हिन्दी से मुखर हो सकती है। कहीं ऐसा तो नहीं है कि इससे उनकी भावनाएँ आहत हो रही हैं! वैसे इस बात पर चर्चा की जा चुकी है और ज्यादातर विद्वानों का मत है कि हिन्दी की स्वीकार्यता–दर विशेषतया हिन्दीतर क्षेत्रों में हिन्दीभाषी क्षेत्रों से किसी भी मायने में कम नहीं है। अगर आप दक्षिण के कुछ हिस्सों अर्थात हैदराबाद, सिंकदराबाद, पांडिचेरी, कन्याकुमारी आदि में जाएँ तो आप यह पाएंगे कि वहाँ हिन्दी को पर्याप्त सम्मान दिया जा रहा है। वहाँ की क्षेत्रीय भाषाओं को लेकर हिन्दी के साथ कोई भेदभाव नहीं किया जाता है। वास्तव में, ज्यादातर प्रांतीय भाषाओं में हिन्दी एक कड़ी की तरह काम करती है।

हमारी संस्कृति के सह–अस्तित्त्व के हमारे काल–परीक्षित प्राचीन आदर्श के अनुसरण में हिन्दी को प्रांतीय भाषाओं के साथ रहना सीखना होगा। उसे विभिन्न राज्यों के बहुभाषी नागरिकों की सभी आमचर्या में अपनी अभिव्यक्तियों को न केवल लोकप्रिय बनाना होगा अपितु उनकी जुबान पर स्वाभाविक रूप से कुछ इस तरह विराजमान होना होगा कि उनकी भाषाओं को कोई क्षति पहुँचने के बजाए उन्हें अपने पास इसकी उपस्थिति से फ़ायदा पहुँचे। उनमें सुरक्षा की भावना का विकास हो। इसके अपने भविष्य के लिए भी यह आवश्यक है। यह न केवल प्रांतीय भाषाओं में अपनी पैठ बनाए बल्कि प्रांतीय भाषाओं की सुगंध को खुद में समोने की कोशिश करे। यह कोशिश अवश्य सफल होगी क्योंकि भाषाई संदर्भ में हम सभी अपनी राष्ट्रीय अस्मिता को बनाए रखने की ज़िम्मेदारी भलीभाँति समझने लगे।चूँकि हमारी नीति प्रांतीय और क्षेत्रीय भाषाओं को भी उतना ही प्रोत्साहन देना है जितना कि हिन्दी को,इसलिए हम वहाँ हिन्दी को बढ़ावा देने की नीति को जारी रखते हुए उनकी क्षेत्रीय भाषाओं के साथ इसके साथ तालमेल बैठाने पर बल दे सकते हैं। भारत में अब वह दिन दूर नहीं जिस दिन महात्मा गाँधी के 'स्वदेशी आंदोलन' की तरह एक दिन 'स्वभाषा आंदोलन' भी चल निकलेगा। जिसके फलस्वरुप हिन्दी भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में **भारत की एकता की पहचान 'हिन्दी'** ही होगी।

**संदर्भ सूची:–**

1. ऋषभ देव शर्मा– हिन्दी दिवस पर विशेष
2. डॉ. (श्रीमती) प्रमोदिनी हाँसदा पूर्व प्रतिकुलपति, झारखंड– हिन्दी के संवर्धन में प्रयोजनमूलक हिन्दी की भूमिका
3. प्रदीप कुमार शर्मा– विश्व मंच पर हमारी हिन्दी प्रकाशनः 12/24/2012
4. डॉ. मनोज श्रीवास्तव– प्रादेशिक भाषाओं के साथ हिंदी का समन्वयन हो प्रकाशनः 12/16/2011
5. www.chauthiduniya.com/2009/12/bhartiya-janta-anekta-mein-ekta-ki-mishal.html